Chapter छह

पूतना वध

छठे अध्याय का सारांश इस प्रकार है—

जब नन्द महाराज वसुदेव के आदेशानुसार घर लौट रहे थे तो उन्होंने मार्ग पर एक विशाल राक्षसी को पड़े देखा और बाद में उसकी मृत्यु के बारे में भी सुना।

जब व्रज के राजा नन्द महाराज गोकुल में होने वाले उत्पातों के बारे में वसुदेव के शब्दों पर विचार कर रहे थे तो वे कुछ भयभीत थे और उन्होंने श्री हरि के चरणकमलों में शरण ग्रहण की। उसी बीच कंस ने गोकुल गाँव में पूतना नाम की एक राक्षसी भेजी जो इधर-उधर घूम-घूमकर छोटे-छोटे बच्चों को मार डालती थी। निस्सन्देह जहाँ कृष्णभावनामृत नहीं है, वहाँ ऐसी राक्षसिनियों का खतरा रहता है, किन्तु जिस गोकुल में साक्षात् भगवान् हों वहाँ पूतना को अपनी ही मृत्यु के अतिरिक्त और क्या मिल सकता था!

एक दिन पूतना बाह्य आकाश से नन्द महाराज के घर गोकुल में पहुँची और अपनी योगशक्ति से

अति सुन्दर स्त्री का रूप धारण कर लिया। वह साहस करके बिना किसी की अनुमति लिए सीधे कृष्ण के शयन-कक्ष में घुस गई। कृष्णकृपा से उसे किसी ने घर में या कमरे में घुसने से मना नहीं किया क्योंकि कृष्ण की ऐसी ही इच्छा थी। बालक कृष्ण ने जो राख से ढकी अग्नि के समान थे, पूतना को देखा और सोचा कि मुझे इस सुन्दर स्त्री के रूप वाली राक्षसिनी का वध करना होगा। योगमाया तथा भगवान् के प्रभाव से मोहित होकर पूतना ने कृष्ण को अपनी गोद में ले लिया तो न तो रोहिणी ने मना किया, न ही यशोदा ने। तब पूतना कृष्ण को अपने स्तन पिलाने लगी, किन्तु उनमें विष चुपड़ा हुआ था। इसलिए बालक कृष्ण ने उसके स्तन इतनी जोर-जोर से चूसे कि उसे असह्य पीड़ा हुई जिससे वह अपना असली रूप में आकर भूमि पर गिर पड़ी। तब कृष्ण उसके स्तन पर एक छोटे शिशु की तरह खेलने लगे। उन्हें खेलता हुआ देखकर गोपियों को राहत हुई और उन्होंने बच्चे को अपनी गोद में उठा लिया। इस घटना के बाद गोपियाँ चौकन्नी रहने लगीं जिससे कोई राक्षसिनी आक्रमण न करे। तब माता यशोदा ने बालक को अपना दूध पिलाया और बिस्तर पर लिटा दिया।

तब तक नन्द तथा उनके संगी ग्वाले मथुरा से लौट आए थे और जब उन्होंने पूतना के विशाल मृत शरीर को देखा तो वे हक्के-बक्के रह गए। हर एक को आश्चर्य हो रहा था कि वसुदेव ने इस दुर्घटना का पूर्वानुमान लगा लिया था। अत: सारे लोग वसुदेव की दूरदृष्टि की प्रशंसा करने लगे। व्रजवासियों ने पूतना के शरीर के खंड-खंड कर डाले, किन्तु कृष्ण द्वारा स्तनपान किए जाने से उसके सारे पाप दूर हो चुके थे अत: जब ग्वालों ने उन टुकड़ों का अग्निदाह किया, तो उससे उठे धुएँ से चारों ओर की वायु आनंदमय सुगंध से भर गई। इस तरह यद्यपि पूतना ने कृष्ण को मार डालना चाहा था वह भगवद्धाम पहुँच गई। इस घटना से हमें यह शिक्षा मिलती है कि यदि कोई व्यक्ति कृष्ण से थोड़ा-बहुत भी लगाव रखता है, चाहे वह शत्रुभाव से क्यों न हो, तो उसे सफलता अवश्य मिलती है। भला उन भक्तों के विषय में क्या कहा जाए जो कृष्ण प्रेम में सहज ही अनुरक्त रहते हैं? जब व्रजवासियों ने पूतना-वध तथा शिशु की कुशलता का समाचार सुना तो वे अत्यधिक प्रसन्न हुए। नन्द महाराज ने बालक को अपनी गोद में उठा लिया और सन्तोष की साँस ली।

श्रीशुक उवाच
नन्दः पथि वचः शौरेर्न मृषेति विचिन्तयन् ।

हरिं जगाम शरणमुत्पातागमशङ्कितः ॥ १ ॥

शब्दार्थ

श्री-शुकः उवाच—श्री शुकदेव गोस्वामी ने कहा; नन्दः—नन्द महाराज ने; पथि—घर आते हुए, रास्ते में; वचः—शब्द; शौरेः—वसुदेव के; न—नहीं; मृषा—निरर्थक; इति—इस प्रकार; विचिन्तयन्—अपने पुत्र के अशुभ के विषय में सोच कर; हरिम्—भगवान्, नियन्ता की; जगाम—ग्रहण की; शरणम्—शरण; उत्पात—उपद्रवों की; आगम—आशा से; शङ्कितः—भयभीत हुए।

शुकदेव गोस्वामी ने कहा : हे राजन्! जब नन्द महाराज घर वापस आ रहे थे तो उन्होंने विचार किया कि वसुदेव ने जो कुछ कहा था वह असत्य या निरर्थक नहीं हो सकता। अवश्य ही गोकुल में उत्पातों के होने का कुछ खतरा रहा होगा। ज्योंही नन्द महाराज ने अपने सुन्दर पुत्र कृष्ण के लिए खतरे के विषय में सोचा त्योंही वे भयभीत हो उठे और उन्होंने परम नियन्ता के चरणकमलों में शरण ली।

तात्पर्य : जब कभी कोई संकट आ पड़ता है, तो शुद्ध भक्त सदैव भगवान् द्वारा दी जाने वाली संरक्षण तथा आश्रया के विषय में सोचता है। *भगवद्गीता* में भी (९.३३) इसी का उपदेश है—*अनित्यमसुखं लोकमिमं प्राप्य भजस्व माम्।* इस जगत में पग पग पर संकट (विपदा) है (*पदं पदं यद्विपदाम्*)। अतएव भक्त के लिए पद-पद पर भगवान् की शरण में जाने के अतिरिक्त कोई अन्य उपाय नहीं रहता।

कंसेन प्रहिता घोरा पूतना बालघातिनी ।
शिशूंश्चचार निघ्नन्ती पुरग्रामव्रजादिषु ॥ २ ॥

शब्दार्थ

कंसेन—कंस द्वारा; प्रहिता—पहले से लगाई गई; घोरा—अत्यन्त भयानक; पूतना—पूतना नामक; बाल-घातिनी—राक्षसी; शिशून्—छोटे छोटे बच्चों को; चचार—घूमती रहती थी; निघ्नन्ती—मारती हुई; पुर-ग्राम-व्रज-आदिषु—नगरों, गाँवों में इधर उधर।

जब नन्द महाराज गोकुल लौट रहे थे तो वही विकराल पूतना, जिसे कंस ने बच्चों को मारने के लिए पहले से नियुक्त कर रखा था, नगरों तथा गाँवों में घूम घूम कर अपना नृशंस कृत्य कर रही थी।

न यत्र श्रवणादीनि रक्षोघ्नानि स्वकर्मसु ।
कुर्वन्ति सात्वतां भर्तुर्यातुधान्यश्च तत्र हि ॥ ३ ॥

शब्दार्थ

न—नहीं; यत्र—जहाँ; श्रवण-आदीनि—श्रवण, कीर्तन इत्यादि भक्तियोग के कार्य; रक्षः-घ्नानि—समस्त विपदाओं तथा अशुभों को मारने की ध्वनि; स्व-कर्मसु—अपने काम में लगी; कुर्वन्ति—ऐसे कार्य किये जाते हैं; सात्वताम् भर्तुः—भक्तों के रक्षक के; यातुधान्यः—बुरे लोग, उत्पाती; च—भी; तत्र हि—हो न हो।

हे राजन्! जहाँ भी लोग कीर्तन तथा श्रवण द्वारा भक्तिकार्यों की अपनी वृत्तियों में लगे रहते हैं (*श्रवणं कीर्तनं विष्णोः*) वहाँ बुरे लोगों से किसी प्रकार का खतरा नहीं रहता। जब साक्षात् भगवान् वहाँ विद्यमान हों तो गोकुल के विषय में किसी प्रकार की चिन्ता की आवश्यकता नहीं थी।

तात्पर्य : शुकदेव गोस्वामी ने महाराज परीक्षित की चिन्ता दूर करने के लिए ही यह श्लोक कहा। चूँकि महाराज परीक्षित कृष्णभक्त थे अतएव जब उन्होंने समझा कि गोकुल में पूतना उत्पात मचा रही थी तो वे कुछ कुछ उद्विग्न हो उठे। इसलिए शुकदेव गोस्वामी ने उन्हें आश्वस्त किया कि गोकुल में कोई खतरा नहीं था। श्रील भक्तिविनोद ठाकुर का गीत है : *नामाश्रय करिऽ यतने तुमि, थाकह आपन काजे।* इसलिए हर एक को सलाह दी जाती है कि वह हरे कृष्ण महामंत्र कीर्तन का आश्रय ग्रहण करे और अपने कार्य में लगा रहे। इसमें कोई हानि नहीं किन्तु लाभ अथाह है। यहाँ तक कि भौतिक दृष्टि से भी सभी प्रकार के खतरों से बचने के लिए हरे कृष्ण मंत्र का कीर्तन करना चाहिए। यह जगत खतरे से पूर्ण है (*पदं पदं यद्विपदाम्*)। इसलिए हमें हरे कृष्ण महामंत्र का कीर्तन करने के लिए प्रोत्साहित होना चाहिए जिससे हमारे परिवार, समाज, पड़ोस तथा देश के सारे काम आसानी से चलें और कोई खतरा न रहे।

सा खेचर्येकदोत्पत्य पूतना नन्दगोकुलम् ।
योषित्वा माययात्मानं प्राविशत्कामचारिणी ॥ ४॥

शब्दार्थ

सा—वह (पूतना); खे-चरी—आकाश मार्ग में यात्रा करने वाली; एकदा—एक बार; उत्पत्य—उड़ते हुए; पूतना—पूतना; नन्द-गोकुलम्—नन्द महाराज के स्थान, गोकुल में; योषित्वा—सुन्दर स्त्री का वेश धारण करके; मायया—योगशक्ति से; आत्मानम्—अपने आपको; प्राविशत्—प्रवेश किया; काम-चारिणी—इच्छानुसार विचरण करने वाली।

एक बार स्वेच्छा से विचरण करने वाली पूतना राक्षसी बाह्य आकाश (अन्तरिक्ष) में घूम रही थी तो वह अपनी योगशक्ति से अपने को अति सुन्दर स्त्री के रूप में बदलकर नन्द महाराज के स्थान गोकुल में प्रविष्ट हुई।

तात्पर्य : राक्षसी याँ ऐसी योगशक्ति जानती हैं जिनसे वे यंत्रों के बिना ही बाह्य आकाश में यात्रा

कर सकती हैं। आज भी भारत के कुछ भागों में ऐसी डाइनें (जादूगरनियाँ) हैं, जो डंडे पर बैठकर पलक मारते एक स्थान से दूसरे स्थान पहुँच जाती हैं। पूतना को यह कला आती थी। उसने सुन्दर स्त्री का वेश धारण कर नन्द महाराज के धाम गोकुल में प्रवेश किया।

तां केशबन्धव्यतिषक्तमल्लिकां
बृहन्नितम्बस्तनकृच्छ्रमध्यमाम् ।
सुवाससं कल्पितकर्णभूषण-
त्विषोल्लसत्कुन्तलमण्डिताननाम् ॥ ५ ॥
वल्गुस्मितापाङ्गविसर्गवीक्षितै-
र्मनो हरन्तीं वनितां व्रजौकसाम् ।
अमंसताम्भोजकरेण रूपिणीं
गोप्यः श्रियं द्रष्टुमिवागतां पतिम् ॥ ६ ॥

शब्दार्थ

ताम्—उसको; केश-बन्ध-व्यतिषक्त-मल्लिकाम्—जिसके जूड़े मल्लिका के फूलों की मालाओं से सजाये गये थे; बृहत्—बहुत बड़े; नितम्ब-स्तन—अपने कूल्हों तथा दृढ़ स्तनों से; कृच्छ्र-मध्यमाम्—पतली कमर के भार से नत; सु-वाससम्—अच्छे वस्त्रों से सज्जित; कल्पित-कर्ण-भूषण—कानों में पहने कुण्डलों की; त्विषा—चमक से; उल्लसत्—अत्यन्त आकर्षक; कुन्तल-मण्डित-आननाम्—काले बालों से घिरे सुन्दर मुखमण्डल वाली; वल्गु-स्मित-अपाङ्ग-विसर्ग-वीक्षितैः—हास्ययुक्त चितवन से; मनः हरन्तीम्—मन को हरती हुई; वनिताम्—अत्यन्त आकर्षक स्त्री ने; व्रज-ओकसाम्—गोकुलवासियों को; अमंसत—सोचा; अम्भोज—कमल लिये हुए; करेण—हाथ से; रूपिणीम्—अत्यन्त सुन्दर; गोप्यः—गोकुल की रहने वाली गोपियाँ; श्रियम्—लक्ष्मी; द्रष्टुम्—देखने के लिए; इव—मानो; आगताम्—आई हो; पतिम्—पति को।

उसके नितम्ब भारी थे, उसके स्तन सुदृढ़ तथा विशाल थे जिससे उसकी पतली कमर पर अधिक बोझ पड़ता प्रतीत हो रहा था। वह अत्यन्त सुन्दर वस्त्र धारण किये थी। उसके केश मल्लिका फूल की माला से सुसज्जित थे जो उसके सुन्दर मुख पर बिखरे हुए थे। उसके कान के कुण्डल चमकीले थे। वह हर व्यक्ति पर दृष्टि डालते हुए आकर्षक ढंग से मुसका रही थी। उसकी सुन्दरता ने व्रज के सारे निवासियों का विशेष रूप से पुरुषों का ध्यान आकृष्ट कर रखा था। जब गोपियों ने उसे देखा तो उन्होंने सोचा कि हाथ में कमल का फूल लिए लक्ष्मी जी अपने पति कृष्ण को देखने आई हैं।

बालग्रहस्तत्र विचिन्वती शिशून्
यदृच्छया नन्दगृहेऽसदन्तकम् ।
बालं प्रतिच्छन्ननिजोरुतेजसं
ददर्श तल्पेऽग्निमिवाहितं भसि ॥ ७ ॥

शब्दार्थ

बाल-ग्रहः—डाइन, जिसका काम छोटे-छोटे बच्चों को मारना है; तत्र—वहाँ खड़ी; विचिन्वती—सोचती हुई, ढूँढती हुई; शिशून्—बालकों के; यदृच्छया—स्वतंत्र रूप से; नन्द-गृहे—नन्द महाराज के घर में; असत्-अन्तकम्—सारे असुरों को मारने में समर्थ; बालम्—बालक को; प्रतिच्छन्न—ढकी; निज-उरु-तेजसम्—अपनी असीम शक्ति को; ददर्श—देखा; तल्पे—बिस्तर पर (लेटा); अग्निम्—अग्नि को; इव—सदृश्य; आहितम्—ढकी; भसि—राख के भीतर।.

छोटे छोटे बालकों को ढूँढती हुई बच्चों का वध करने वाली पूतना बिना किसी रोकटोक के नन्द महाराज के घर में घुस गई क्योंकि वह भगवान् की परा शक्ति द्वारा भेजी गई थी। वह किसी से पूछे बिना नन्द महाराज के उस कमरे में घुस गई जहाँ उसने बालक को बिस्तरे पर सोते देखा जो राख में ढकी अग्नि के समान असीम शक्ति-सम्पन्न था। वह समझ गई कि यह बालक कोई साधारण बालक नहीं है, अपितु सारे असुरों का वध करने के हेतु आया है।

तात्पर्य : असुरगण सदैव उत्पात मचाते और हत्या करते रहते हैं, किन्तु नन्द महाराज के घर में बिस्तर पर लेटा बालक असुरों का वध करने के लिए उत्पन्न हुआ था।

विबुध्य तां बालकमारिकाग्रहं
चराचरात्मा स निमीलितेक्षणः ।
अनन्तमारोपयदङ्कमन्तकं
यथोरगं सुप्तमबुद्धिरज्जुधीः ॥ ८ ॥

शब्दार्थ

विबुध्य—समझ कर; ताम्—उसको (पूतना को); बालक-मारिका-ग्रहम्—बालकों को मारने में पटु डाइन को; चर-अचर-आत्मा—सर्वव्यापक परमात्मा कृष्ण; सः—उसने; निमीलित-ईक्षणः—अपनी आँखें बन्द कर लीं; अनन्तम्—असीम; आरोपयत्—रख लिया; अङ्कम्—अपनी गोद में; अन्तकम्—अपने विनाश के लिए; यथा—जिस तरह; उरगम्—साँप को; सुप्तम्—सोये हुए; अबुद्धि—बुद्धिहीन व्यक्ति; रज्जु-धीः—साँप को रस्सी समझने वाला।.

बिस्तर पर लेटे सर्वव्यापी परमात्मा कृष्ण ने समझ लिया कि छोटे बालकों को मारने में पटु यह डाइन पूतना मुझे मारने आई है। अतएव उन्होंने अपनी आँखें बन्द कर लीं मानो उससे डर गये हों। तब पूतना ने अपने विनाश-रूप कृष्ण को अपनी गोद में ले लिया जिस तरह कि बुद्धिहीन मनुष्य सोते साँप को रस्सी समझ कर अपनी गोद में ले लेता है।

तात्पर्य : इस श्लोक में दो जटिलताएँ हैं। जब कृष्ण ने देखा कि पूतना मुझे मारने आई है, तो उन्होंने सोचा कि क्योंकि यह स्त्री मातृ-स्नेह दिखाने आई है भले ही वह कृत्रिम ही क्यों न हो अतः उसे वर देना चाहिए। फलतः उन्होंने कुछ चिन्ता से उसे देखा और फिर अपनी आँखें बन्द कर लीं। पूतना राक्षसी भी सकपकाई थी। वह इतनी बुद्धिमान न थी जो समझ पाती कि वह सोते सर्प को अपनी

गोद में ले रही है; उसने सर्प को सामान्य रस्सी समझा। *अन्तकम्* तथा *अनन्तम्*—ये दोनों शब्द परस्पर विरोधी हैं। बुद्धिमान न होने के कारण पूतना ने सोचा कि वह अपने *अन्तकम्* अर्थात् काल को मार सकती है किन्तु *अनन्त* होने से उस बालक को कोई नहीं मार सकता था।

तां तीक्ष्णचित्तामतिवामचेष्टितां
वीक्ष्यान्तरा कोषपरिच्छदासिवत् ।
वरस्त्रियं तत्प्रभया च धर्षिते
निरीक्ष्यमाणे जननी ह्यतिष्ठताम् ॥ ९ ॥

शब्दार्थ

ताम्—उस (पूतना राक्षसी को); तीक्ष्ण-चित्ताम्—बच्चों का वध करने के लिए अत्यन्त पाषाण हृदय वाली; अति-वाम-चेष्टिताम्—यद्यपि वह बच्चे के साथ माता से भी अधिक अच्छा बर्ताव करने का प्रयास कर रही थी; वीक्ष्य अन्तरा—कमरे के भीतर उसे देख कर; कोष-परिच्छद-असि-वत्—मुलायम म्यान के भीतर तेज तलवार की तरह; वर-स्त्रियम्—सुन्दर स्त्री के; तत्-प्रभया—उसके प्रभाव से; च—भी; धर्षिते—अभिभूत, विह्वल; निरीक्ष्यमाणे—देख रही थीं; जननी—दोनों माताएँ; हि—निश्चय ही; अतिष्ठताम्—वे मौन रह गईं।

पूतना राक्षसी का हृदय कठोर एवं क्रूर था किन्तु ऊपर से वह अत्यन्त स्नेहमयी माता सदृश लग रही थी। वह मुलायम म्यान के भीतर तेज तलवार जैसी थी। यद्यपि यशोदा तथा रोहिणी ने उसे कमरे के भीतर देखा किन्तु उसके सौन्दर्य से अभिभूत होने के कारण उन्होंने उसे रोका नहीं अपितु वे मौन रह गईं क्योंकि वह बच्चे के साथ मातृवत् व्यवहार कर रही थी।

तात्पर्य : यद्यपि पूतना बाहरी स्त्री थी और साक्षात् भयानक काल थी क्योंकि उसके हृदय में बालक को मार डालने का संकल्प था किन्तु जब वह आई और उसने बालक को अपनी गोद में ले लिया तो बालक की माताएँ उसके सौन्दर्य पर इतनी मुग्ध हो गईं कि उन्होंने उसे ऐसा करने से रोका भी नहीं। कभी-कभी सुन्दर स्त्री अत्यन्त घातक होती है क्योंकि लोग उसकी बाह्य सुन्दरता पर मोहित होकर (*मायामोहित*) यह नहीं समझ पाते कि उसके मन में आखिर है क्या! जो लोग बहिरंगा शक्ति के सौन्दर्य द्वारा मुग्ध हो जाते हैं, वे *मायामोहित* कहलाते हैं। *मोहितं नाभिजानाति मामेभ्यः परमव्ययम्* (*भगवद्गीता* ७.१३)। *न ते विदुःस्वार्थगतिं हि विष्णुंदुराशया ये बहिरर्थमानिनः* (*श्रीमद्भागवत* ७.५.३१)। यहाँ पर रोहिणी तथा यशोदा दोनों माताएँ बाह्य शक्ति से मुग्ध अर्थात् मायामोहित न थीं अपितु भगवान् की लीला के विकास हेतु योगमाया द्वारा वे मुग्ध कर दी गईं। योगमाया का कार्य ही है ऐसा *मायामोह*।

तस्मिन्स्तनं दुर्जरवीर्यमुल्बणं
घोराङ्कमादाय शिशोर्ददावथ ।
गाढं कराभ्यां भगवान्प्रपीड्य तत्-
प्राणैः समं रोषसमन्वितोऽपिबत् ॥ १० ॥

शब्दार्थ

तस्मिन्—उस स्थान में; स्तनम्—स्तन; दुर्जर-वीर्यम्—विष से मिश्रित अत्यन्त शक्तिशाली हथियार; उल्बणम्—भयंकर; घोरा—अत्यन्त खूँखार पूतना; अङ्कम्—अपनी गोद में; आदाय—रखकर; शिशोः—बालक के मुख में; ददौ—दिया; अथ—तत्पश्चात्; गाढम्—अत्यन्त कठोर; कराभ्याम्—दोनों हाथों से; भगवान्—भगवान्; प्रपीड्य—पीड़ा पहुँचाते हुए; तत्-प्राणैः—उसके प्राण; समम्—के साथ; रोष-समन्वितः—उस पर क्रुद्ध होकर; अपिबत्—स्तनपान किया।

उसी जगह भयानक तथा खूँख्वार राक्षसी ने कृष्ण को अपनी गोद में ले लिया और उनके मुँह में अपना स्तन दे दिया। उसके स्तन के चूँचुक में घातक एवं तुरन्त प्रभाव दिखाने वाला विष चुपड़ा हुआ था किन्तु भगवान् कृष्ण उस पर अत्यन्त क्रुद्ध हुए और उसके स्तन को पकड़ कर अपने हाथों से कड़ाई से निचोड़ा और विष तथा उसके प्राण दोनों चूस डाले।

तात्पर्य : भगवान् कृष्ण पूतना पर अपने लिए क्रुद्ध नहीं थे प्रत्युत इसलिए कि उस राक्षसी ने व्रजभूमि के अनेक नन्हें बालकों को मार डाला था। इसलिए उन्होंने निश्चय किया कि उसके प्राण लेकर उसे दण्ड दिया जाय।

सा मुञ्च मुञ्चालमिति प्रभाषिणी
निष्पीड्यमानाखिलजीवमर्मणि ।
विवृत्य नेत्रे चरणौ भुजौ मुहुः
प्रस्विन्नगात्रा क्षिपती रुरोद ह ॥ ११ ॥

शब्दार्थ

सा—वह (पूतना); मुञ्च—छोड़ो; मुञ्च—छोड़ो; अलम्—बस! बस!; इति—इस प्रकार; प्रभाषिणी—चिल्लाती; निष्पीड्यमाना—बुरी तरह दबाई जाकर; अखिल-जीव-मर्मणि—सारे मर्मस्थलों में; विवृत्य—खोल कर; नेत्रे—दोनों आँखें; चरणौ—दोनों पाँव; भुजौ—दोनों हाथ; मुहुः—पुनः पुनः; प्रस्विन्न-गात्रा—पसीने से तर शरीर; क्षिपती—फेंकते हुए; रुरोद—जोर से चिल्लाई; ह—निस्सन्देह।

प्रत्येक मर्मस्थल में असह्य दबाव से पूतना चिल्ला उठी, ''मुझे छोड़ दो, मुझे छोड़ दो! अब मेरा स्तनपान मत करो।'' पसीने से तर, फटी हुई आँखें तथा हाथ और पैर पटकती हुई वह बार-बार जोर जोर से चिल्लाने लगी।

तात्पर्य : कृष्ण ने इस राक्षसी को बुरी तरह दण्ड दिया। वह हाथ-पैर इधर-उधर पटकने लगी और अपने दुष्कर्मों का दण्ड देने के लिए कृष्ण भी उसे लतियाने लगे।

तस्याः स्वनेनातिगभीररंहसा
सादिर्महीद्यौश्च चचाल सग्रहा ।
रसा दिशश्च प्रतिनेदिरे जनाः
पेतुः क्षितौ वज्रनिपातशङ्कया ॥ १२ ॥

शब्दार्थ

तस्याः—विकट राक्षसी पूतना की; स्वनेन—ध्वनि से; अति—अत्यन्त; गभीर—गहन; रंहसा—शक्तिशाली; स-अद्रिः—पर्वतों समेत; मही—पृथ्वी; द्यौः च—तथा आकाश; चचाल—हिलने लगे; स-ग्रहा—तारों समेत; रसा—पृथ्वी लोक के नीचे; दिशः च—तथा सारी दिशाएँ; प्रतिनेदिरे—गूँजने लगीं; जनाः—लोग; पेतुः—गिर पड़े; क्षितौ—पृथ्वी पर; वज्र-निपात-शङ्कया—इस आशंका से कि वज्रपात हुआ है।

पूतना की गहन तथा जोरदार चीत्कार से पर्वतों समेत पृथ्वी तथा ग्रहों समेत आकाश डगमगाने लगा। नीचे के लोक तथा सारी दिशाएँ थरथरा उठीं और लोग इस आशंका से गिर पड़े कि उन पर बिजली गिर रही हो।

तात्पर्य : श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती की टिप्पणी है कि इस श्लोक में *रसा* शब्द पृथ्वी के नीचे के लोकों का—रसातल, अतल, वितल, सुतल तथा तलातल का द्योतक है।

इशाचरीत्थं व्यथितस्तना व्यसुर्
व्यादाय केशांश्चरणौ भुजावपि ।
प्रसार्य गोष्ठे निजरूपमास्थिता
वज्राहतो वृत्र इवापतन्नृप ॥ १३ ॥

शब्दार्थ

निशा-चरी—राक्षसी ने; इत्थम्—इस तरह; व्यथित-स्तना—स्तन पर दबाब पड़ने से दुखी; व्यसुः—प्राण छोड़ दिया; व्यादाय—मुँह फैला कर; केशान्—बालों का गुच्छा; चरणौ—दोनों पाँव; भुजौ—दोनों हाथ; अपि—भी; प्रसार्य—पसार कर; गोष्ठे—गोचर में; निज-रूपम् आस्थिता—अपने मूल आसुरी रूप में स्थित; वज्र-आहतः—इन्द्र के वज्र से मरा हुआ; वृत्रः—वृत्रासुर; इव—सदृश; अपतत्—गिर पड़ी; नृप—हे राजन्।

इस तरह कृष्ण द्वारा स्तन पर दबाव डालने से अत्यन्त व्यथित पूतना ने अपने प्राण त्याग दिये। हे राजा परीक्षित, वह अपना मुँह फैलाये तथा अपने हाथ, पाँव पसारे और बाल फैलाये अपने मूल राक्षसी रूप में गोचर में गिर पड़ी मानो इन्द्र के वज्र से आहत वृत्रासुर गिरा हो।

तात्पर्य : पूतना दुर्दांत राक्षसी थी जिसे योगशक्ति द्वारा अपने मूल रूप को छिपाने की कला ज्ञात थी किन्तु जब वह मर गई तो उसकी योगशक्ति उसे छिपा न पाई जिससे वह अपने मूल रूप में प्रकट हो गई।

अतमानोऽपि तद्देहस्त्रिगव्यूत्यन्तरद्रुमान् ।
चूर्णयामास राजेन्द्र महदासीत्तदद्भुतम् ॥ १४॥

शब्दार्थ

पतमानः अपि—गिरते हुए भी; तत्-देहः—उसका विशाल शरीर; त्रि-गव्यूति-अन्तर—बारह मील की सीमा के भीतर; द्रुमान्—सारे वृक्षों को; चूर्णयाम् आस—चूर चूर कर दिये; राजेन्द्र—हे राजा परीक्षित; महत् आसीत्—बहुत विशाल था; तत्—वह शरीर; अद्भुतम्—तथा अत्यन्त विचित्र।

हे राजा परीक्षित, जब पूतना का विशाल शरीर भूमि पर गिरा तो उससे बारह मील के दायरे के सारे वृक्ष चूर चूर हो गये। अपने विशाल शरीर में प्रकट होने से वह सचमुच असामान्य थी।

तात्पर्य : कृष्ण द्वारा स्तनपान किये जाने से जो पीड़ा हुई उससे मरते समय पूतना ने न केवल मकान छोड़ दिया अपितु उसने वह गाँव भी छोड़ दिया और उसका विशाल शरीर चरागाह में गिर पड़ा।

ईषामात्रोग्रदंष्ट्रास्यं गिरिकन्दरनासिकम् ।
गण्डशैलस्तनं रौद्रं प्रकीर्णारुणमूर्धजम् ॥ १५॥
अन्धकूपगभीराक्षं पुलिनारोहभीषणम् ।
बद्धसेतुभुजोर्वङ्घ्रि शून्यतोयह्रदोदरम् ॥ १६॥
सन्तत्रसुः स्म तद्वीक्ष्य गोपा गोप्यः कलेवरम् ।
पूर्वं तु तन्निःस्वनितभिन्नहृत्कर्णमस्तकाः ॥ १७॥

शब्दार्थ

ईषा-मात्र—हल के फाल की तरह; उग्र—भयानक; दंष्ट्र—दाँत; आस्यम्—मुँह के भीतर; गिरि-कन्दर—पर्वत की गुफा के समान; नासिकम्—नाक के छेद; गण्ड-शैल—पत्थर की बड़ी शिला की तरह; स्तनम्—स्तन; रौद्रम्—अत्यन्त विकराल; प्रकीर्ण—बिखरे हुए; अरुण-मूर्ध-जम्—ताम्र रंग के बालों वाली; अन्ध-कूप—भूपट्ट कुओं की तरह; गभीर—गहरे; अक्षम्—आँख के गड्ढे; पुलिन-आरोह-भीषणम्—जिसकी जाँघें नदी के किनारों की तरह भयावनी थीं; बद्ध-सेतु-भुज-उरु-अङ्घ्रि—जिसकी भुजाएँ, जाँघें तथा पैर मजबूत बने पुलों के समान थे; शून्य-तोय-ह्रद-उदरम्—जिसका पेट जलविहीन झील की तरह था; सन्तत्रसुः स्म—डर गये; तत्—उस; वीक्ष्य—देखकर; गोपाः—सारे ग्वाले; गोप्यः—तथा ग्वालिनें; कलेवरम्—ऐसे विशाल शरीर को; पूर्वम् तु—इसके पहले; तत्-निःस्वनित—उसकी पुकार से; भिन्न—दहले हुए, कटे; हृत्—जिनके हृदय; कर्ण—कान; मस्तकाः—तथा सिर।

राक्षसी के मुँह में दाँत हल के फाल (कुशी) जैसे थे; उसके नथुने पर्वत-गुफाओं की तरह गहरे थे और उसके स्तन पर्वत से गिरे हुए बड़े बड़े शिलाखण्डों के समान थे। उसके बिखरे बाल ताम्र रंग के थे। उसकी आँखों के गड्ढे गहरे अंधे (भूपट्ट) कुँओं जैसे थे, उसकी भयानक जाँघें नदी के किनारों जैसी थीं; उसके बाजू, टाँगें तथा पाँव बड़े बड़े पुलों की तरह थीं तथा उसका पेट सूखी झील की तरह लग रहा था। राक्षसी की चीख से ग्वालों तथा उनकी पत्नियों के हृदय, कान तथा सिर पहले ही दहल चुके थे और जब उन्होंने उसके अद्भुत शरीर को देखा तो वे और

भी ज्यादा सहम गये।

बालं च तस्या उरसि क्रीडन्तमकुतोभयम् ।
गोप्यस्तूर्णं समभ्येत्य जगृहुर्जातसम्भ्रमाः ॥ १८ ॥

शब्दार्थ

बालम् च—बालक भी; तस्याः—उस (पूतना) के; उरसि—छाती पर; क्रीडन्तम्—खेलने में व्यस्त; अकुतोभयम्—निडर होकर; गोप्यः—सारी गोपियाँ; तूर्णम्—तुरन्त; समभ्येत्य—पास आकर; जगृहुः—उठा लिया; जात-सम्भ्रमाः—उसी स्नेह के साथ।

बालक कृष्ण भी निडर होकर पूतना की छाती के ऊपरी भाग पर खेल रहा था और जब गोपियों ने बालक के अद्भुत कार्यकलाप को देखा तो उन्होंने अत्यन्त हर्षित होकर आगे बढ़ते हुए उसे उठा लिया।

तात्पर्य : ये हैं पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् कृष्ण। यद्यपि योगशक्ति से पूतना अपने शरीर को घटा-बढ़ा सकती थी और उसी के अनुसार शक्ति प्राप्त करती थी किन्तु भगवान् चाहे जिस भी रूप में क्यों न हों, समान रूप से शक्तिशाली रहते हैं। कृष्ण असली भगवान् हैं क्योंकि चाहे वे बालक हों या युवक, वे रहते हैं वही पुरुष, उन्हें ध्यान या किसी अन्य बाह्य प्रयास से शक्तिशाली बनने की आवश्यकता नहीं होती। इसलिए जब बिकट शक्तिशालिनी पूतना ने अपना शरीर बढ़ाया तो कृष्ण वैसे ही नन्हें बालक बने रहे और निडर होकर उसकी छाती के ऊपरी भाग पर खेलते रहे। *षडैश्वर्य-पूर्ण।* भगवान् चाहे जिस रूप में हों अपनी समस्त शक्तियों से सदैव पूर्ण रहते हैं। उनकी शक्तियाँ सदैव पूर्ण रहती हैं। *परास्य शक्तिर्विविधैव श्रूयते।* वे किसी भी परिस्थिति में अपनी सारी शक्तियों का प्रदर्शन कर सकते हैं।

यशोदारोहिणीभ्यां ताः समं बालस्य सर्वतः ।
रक्षां विदधिरे सम्यग्गोपुच्छभ्रमणादिभिः ॥ १९ ॥

शब्दार्थ

यशोदा-रोहिणीभ्याम्—यशोदा तथा रोहिणी माताओं के साथ जिन्होंने मुख्यतः बालक की चिम्मेदारी ली; ताः—अन्य गोपियाँ; समम्—यशोदा तथा रोहिणी की ही तरह महत्त्वपूर्ण; बालस्य—बालक के; सर्वतः—सारे खतरों से; रक्षाम्—रक्षा; विदधिरे—सम्पन्न किया; सम्यक्—भलीभाँति; गो-पुच्छ-भ्रमण-आदिभिः—चँवर डुला कर ।

तत्पश्चात् माता यशोदा तथा रोहिणी ने अन्य प्रौढ़ गोपियों समेत बालक श्रीकृष्ण की पूर्ण संरक्षण देने के लिए चँवर डुलाया।

तात्पर्य : जब कृष्ण इतने बड़े खतरे से बच गये तो माता यशोदा तथा रोहिणी को मुख्य रूप से

चिन्ता हो गई। अन्य वृद्धा गोपियों ने भी जो उन्हीं की तरह व्याकुल थीं, माता यशोदा तथा रोहिणी का अनुकरण किया। यहाँ हम पाते हैं कि घरेलू कार्यों में स्त्रियाँ बालक की रक्षा गाय की सहायता से ही करती थीं। वे जानती थीं कि बच्चे को सभी प्रकार के खतरों से बचाने के लिए किस प्रकार चँवर डुलायी जाती है। गोरक्षा से अनेक सुविधाएँ प्राप्त होती हैं किन्तु लोग इन बातों को भूल चुके हैं। इसीलिए कृष्ण *भगवद्गीता* में गायों की सुरक्षा पर बल देते हैं (*कृषिगोरक्ष्य वाणिज्यं वैश्यकर्म स्वभावजम्*)। आज भी वृन्दावन के आसपास के गाँवों के निवासी गाय की रक्षा करके सुखपूर्वक जीवन बिताते हैं। वे गोबर को अच्छे से सँभालकर रखते हैं और सुखा कर ईंधन की तरह उसका प्रयोग करते हैं। उनके पास पर्याप्त अन्न-भण्डार रहता है और गायों की रक्षा करने से उनके पास पर्याप्त दूध तथा दूध से बनने वाले पदार्थ होते हैं जिनसे सारी आर्थिक समस्याएँ हल हो जाती हैं। मात्र गोरक्षा से ग्रामीण लोग बड़ी शान्ति से रहते हैं। यहाँ तक कि गोमूत्र तथा गोबर के औषधीय उपयोग भी हैं।

गोमूत्रेण स्नापयित्वा पुनर्गोरजसार्भकम् ।
रक्षां चक्रुश्च शकृता द्वादशाङ्गेषु नामभिः ॥ २० ॥

शब्दार्थ

गो-मूत्रेण—गायों के पेशाब से; स्नापयित्वा—नहला कर; पुनः—फिर से; गो-रजसा—गोधूलि से; अर्भकम्—छोटे बालक को; रक्षाम्—रक्षा; चक्रुः—सम्पन्न किया; च—भी; शकृता—गोबर से; द्वादश-अङ्गेषु—बारह जगहों में (द्वादश तिलक); नामभीः—भगवान् का नाम अंकित करके।

बालक को गोमूत्र से अच्छी तरह नहलाया गया और फिर गोधूलि से उसको लेप किया गया। फिर उनके शरीर में बारह अंगों पर, तिलक लगाने की भाँति माथे से शुरु करके, गोबर से भगवान् के विभिन्न नाम अंकित किये गये। इस तरह बालक को सुरक्षा प्रदान की गई।

गोप्यः संस्पृष्टसलिला अङ्गेषु करयोः पृथक् ।
न्यस्यात्मन्यथ बालस्य बीजन्यासमकुर्वत ॥ २१ ॥

शब्दार्थ

गोप्यः—गोपियों ने; संस्पृष्ट-सलिलाः—जल के प्याले को छूकर तथा पीकर (आचमन करके); अङ्गेषु—अपने शरीरों पर; करयोः—दोनों हाथों पर; पृथक्—अलग अलग; न्यस्य—मंत्र के अक्षरों को रख कर; आत्मनि—अपने ऊपर; अथ—तब; बालस्य—बालक के; बीज-न्यासम्—मंत्रन्यास की विधि; अकुर्वत—सम्पन्न की।

गोपियों ने सर्वप्रथम अपने दाहिने हाथ से जल का एक घूँट पी कर आचमन किया। उन्होंने अपने शरीरों तथा हाथों को न्यास-मंत्र से शुद्ध बनाया और तब उन्होंने बालक के शरीर को भी

उसी मंत्र से परिशुद्ध किया।

तात्पर्य : *न्यासमन्त्र* में दाहिने हाथ में जल लेकर उसे पी कर आचमन किया जाता है। शरीर को शुद्ध करने के लिए भिन्न-भिन्न *विष्णुमन्त्र* हैं। गोपियाँ तथा वास्तव में सारे गृहस्थ वैदिक मंत्रों का उच्चारण करके शुद्ध बनने की विधि जानते थे। इस विधि से गोपियों ने सर्वप्रथम स्वयं को शुद्ध बनाया और फिर बालक कृष्ण को। *अंगन्यास* तथा *करन्यास* की विधि में थोड़ा जल पी कर मंत्र पढ़ा जाता है। मंत्र के पूर्व *ॐ नमः* उच्चारण किया जाता है— *ॐ नमोऽजस्तवाङ्घ्री अव्यात्, मं मनो मणिमांस्तव जानुनी अव्यात्।* भारतीय संस्कृति खो देने से भारतीय गृहस्थ यह भूल चुके हैं कि किस तरह अंगन्यास किया जाता है। वे एकमात्र इन्द्रियतृप्ति में लगे रहते हैं। उन्हें मानव सभ्यता का किसी तरह का उन्नत ज्ञान नहीं है।

अव्यादजोऽङ्घ्रि मणिमांस्तव जान्वथोरू
यज्ञोऽच्युतः कटितटं जठरं हयास्यः ।
हृत्केशवस्त्वदुर ईश इनस्तु कण्ठं
विष्णुर्भुजं मुखमुरुक्रम ईश्वरः कम् ॥ २२॥
चक्र्यग्रतः सहगदो हरिरस्तु पश्चात्
त्वत्पार्श्वयोर्धनुरसी मधुहाजनश्च ।
कोणेषु शङ्ख उरुगाय उपर्युपेन्द्रस्
तार्क्ष्यः क्षितौ हलधरः पुरुषः समन्तात् ॥ २३॥

शब्दार्थ

अव्यात्—रक्षा करे; अजः—भगवान् अज; अङ्घ्रि—पाँव; मणिमान्—भगवान् मणिमान; तव—तुम्हारे; जानु—घुटने; अथ—तत्पश्चात्; उरू—जाँघें; यज्ञः—यज्ञदेव; अच्युतः—भगवान् अच्युत; कटि-तटम्—कमर का ऊपरी हिस्सा; जठरम्—उदर; हयास्यः—भगवान् हयग्रीव; हृत्—हृदय; केशवः—भगवान् केशव; त्वत्—तुम्हारा; उरः—वक्षस्थल, सीना; ईशः—परमनियन्ता, भगवान् ईश; इनः—सूर्य देव; तु—लेकिन; कण्ठम्—गला; विष्णुः—भगवान् विष्णु; भुजम्—बाहें; मुखम्—मुँह; उरुक्रमः—भगवान् उरुक्रम; ईश्वरः—भगवान् ईश्वर; कम्—सिर; चक्री—चक्र धारण करने वाला; अग्रतः—सामने; सह-गदः—गदाधारी; हरिः—भगवान् हरि; अस्तु—रहता रहे; पश्चात्—पीछे, पीठ पर; त्वत्-पार्श्वयोः—तुम्हारी दोनों बगलों में; धनुः-असी—धनुष तथा तलवार धारण करने वाला; मधु-हा—मधु असुर का वध करने वाला; अजनः—विष्णु; च—तथा; कोणेषु—कोनों में; शङ्खः—शंखधारी; उरुगायः—पूजित; उपरि—ऊपर; उपेन्द्रः—भगवान् उपेन्द्र; तार्क्ष्यः—गरुड़; क्षितौ—पृथ्वी पर; हलधरः—भगवान् हलधर; पुरुषः—परम पुरुष; समन्तात्—सभी दिशाओं में।

(शुकदेव गोस्वामी ने महाराज परीक्षित को बतलाया कि गोपियों ने कृष्ण की रक्षा उपयुक्त विधि के अनुसार निम्नलिखित मंत्र द्वारा की)—अज तुम्हारी पाँवों की, मणिमान तुम्हारे घुटनों की, यज्ञ तुम्हारी जाँघों की, अच्युत तुम्हारी कमर के ऊपरी भाग की तथा हयग्रीव तुम्हारे उदर की रक्षा करें। केशव तुम्हारे हृदय की, ईश तुम्हारे वक्षस्थल की, सूर्यदेव तुम्हारे गले की, विष्णु

तुम्हारे भुजाओं की, उरुक्रम तुम्हारे मुँह की तथा ईश्वर तुम्हारे सिर की रक्षा करें। चक्री आगे से, गदाधारी हरि पीछे से तथा धनुर्धर मधुहा एवं खड्ग् भगवान् विष्णु दोनों ओर से तुम्हारी रक्षा करें। शंखधारी उरुगाय समस्त कोणों से तुम्हारी रक्षा करें। उपेन्द्र ऊपर से, गरुड़ धरती पर तथा परम पुरुष हलधर चारों ओर से तुम्हारी रक्षा करें।

तात्पर्य : खेतिहरों के घरों में भी जो सभ्यता की आधुनिक विधियों में बढ़े-चढ़े नहीं थे, स्त्रियाँ गोबर तथा गोमूत्र के द्वारा मंत्र पढ़कर बच्चों की रक्षा करना जानती थी। बड़े से बड़े खतरों से महती सुरक्षा प्रदान करने की यह एक सरल तथा व्यावहारिक विधि थी। इसे कैसे करना है लोगों को जानना चाहिए क्योंकि यह वैदिक सभ्यता का अंग है।

इन्द्रियाणि हृषीकेशः प्राणान्नारायणोऽवतु ।
श्वेतद्वीपपतिश्चित्तं मनो योगेश्वरोऽवतु ॥ २४॥

शब्दार्थ

इन्द्रियाणि—सारी इन्द्रियों को; हृषीकेशः—सभी इन्द्रियों के रक्षक भगवान् हृषीकेश; प्राणान्—सारे प्राणों को; नारायणः—भगवान् नारायण; अवतु—रक्षा करें; श्वेतद्वीप-पतिः—श्वेतद्वीप के स्वामी, विष्णु; चित्तम्—हृदय को; मनः—मन को; योगेश्वरः—भगवान् योगेश्वर; अवतु—संरक्षण प्रदान करें।

हृषीकेश तुम्हारी इन्द्रियों की तथा नारायण तुम्हारे प्राणवायु की रक्षा करें। श्वेतद्वीप के स्वामी तुम्हारे चित्त की तथा योगेश्वर तुम्हारे मन की रक्षा करें।

पृश्निगर्भस्तु ते बुद्धिमात्मानं भगवान्परः ।
क्रीडन्तं पातु गोविन्दः शयानं पातु माधवः ॥ २५॥
व्रजन्तमव्याद्वैकुण्ठ आसीनं त्वां श्रियः पतिः ।
भुञ्जानं यज्ञभुक्पातु सर्वग्रहभयङ्करः ॥ २६॥

शब्दार्थ

पृश्निगर्भः—भगवान् पृश्निगर्भ; तु—निस्सन्देह; ते—तुम्हारी; बुद्धिम्—बुद्धि को; आत्मानम्—आत्मा को; भगवान्—भगवान; परः—दिव्य; क्रीडन्तम्—खेलते हुए; पातु—रक्षा करें; गोविन्दः—गोविन्द; शयानम्—सोते समय; पातु—रक्षा करें; माधवः—भगवान् माधव; व्रजन्तम्—चलते हुए; अव्यात्—रक्षा करें; वैकुण्ठः—भगवान् वैकुण्ठ; आसीनम्—बैठे हुए; त्वाम्—तुमको; श्रियः पतिः—लक्ष्मीपति, नारायण; भुञ्जानम्—जीवन का भोग करते हुए; यज्ञभुक्—यज्ञभुक; पातु—रक्षा करें; सर्व-ग्रह-भयम्-करः—जो सारे दुष्ट ग्रहों को भय देने वाले।

भगवान् प्रश्निगर्भ तुम्हारी बुद्धि की तथा पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् तुम्हारे आत्मा की रक्षा करें। तुम्हारे खेलते समय गोविन्द तथा तुम्हारे सोते समय माधव तुम्हारी रक्षा करें। भगवान् वैकुण्ठ तुम्हारे चलते समय तथा लक्ष्मीपति नारायण तुम्हारे बैठते समय तुम्हारी रक्षा करें। इसी

तरह भगवान् यज्ञभुक, जिनसे सारे दुष्टग्रह भयभीत रहते हैं तुम्हारे भोग के समय सदैव तुम्हारी रक्षा करें।

डाकिन्यो यातुधान्यश्च कुष्माण्डा येऽर्भकग्रहाः ।
भूतप्रेतपिशाचाश्च यक्षरक्षोविनायकाः ॥ २७॥
कोटरा रेवती ज्येष्ठा पूतना मातृकादयः ।
उन्मादा ये ह्यपस्मारा देहप्राणेन्द्रियद्रुहः ॥ २८॥
स्वप्नदृष्टा महोत्पाता वृद्धा बालग्रहाश्च ये ।
सर्वे नश्यन्तु ते विष्णोर्नामग्रहणभीरवः ॥ २९॥

शब्दार्थ

डाकिन्यः यातुधान्यः च कुष्माण्डाः—डाइनें, चुडैलें, बच्चों की दुश्मनें; ये—जो हैं; अर्भक-ग्रहाः—बच्चों के लिए अशुभ नक्षत्रों तुल्य; भूत—दुष्टात्माएँ; प्रेत—प्रेत; पिशाचाः—भूतों के ही तुल्य दुष्टात्माएँ; च—भी; यक्ष—यक्षगण; रक्षः—राक्षसगण; विनायकाः—विनायक नाम के; कोटरा—कोटरा नामक; रेवती—रेवती नामक; ज्येष्ठा—ज्येष्ठा नामक; पूतना—पूतना नामक; मातृका-आदयः—मातृका इत्यादि दुष्टिनें; उन्मादाः—उन्माद उत्पन्न करने वाली; ये—जो अन्य; हि—निस्सन्देह; अपस्माराः—स्मृति हानि करने वाली; देह-प्राण-इन्द्रिय—शरीर, प्राण तथा इन्द्रियों को; द्रुहः—कष्ट देने वाली; स्वप्न-दृष्टाः—बुरे सपने लाने वाले, दुष्टात्मा; महा-उत्पाताः—महान् उत्पात मचाने वाले; वृद्धाः—अनुभवी; बाल-ग्रहाः च—तथा बालकों पर आक्रमण करने वाले; ये—जो; सर्वे—सभी; नश्यन्तु—विनष्ट हों; ते—वे; विष्णोः—भगवान् विष्णु के; नाम-ग्रहण—नाम लेने से; भीरवः—डर जाते हैं।

डाकिनी, यातुधानी तथा कुष्माण्ड नामक दुष्ट डाइनें बच्चों की सबसे बड़ी शत्रु हैं तथा भूत, प्रेत, पिशाच, यक्ष, राक्षस तथा विनायक जैसे दुष्टात्माओं के साथ कोटरा, रेवती, ज्येष्ठा, पूतना तथा मातृका जैसी डाइनें भी सदैव शरीर, प्राण तथा इन्द्रियों को कष्ट पहुँचाने के लिए तैयार रहती हैं जिससे स्मृति की हानि, उन्माद तथा बुरे स्वप्न उत्पन्न होते हैं। वे दुष्ट अनुभवी वृद्धों की तरह बच्चों के लिए विशेष रूप से भारी उत्पात खड़ा करते हैं। किन्तु भगवान् विष्णु के नामोच्चार से ही उन्हें नष्ट किया जा सकता है क्योंकि जब भगवान् विष्णु का नाम प्रतिध्वनित होता है, तो वे सब डर जाते हैं और दूर भाग जाते हैं।

तात्पर्य : *ब्रह्म-संहिता* (५.३३) में कहा गया है—

अद्वैतमच्युतमनादिमनन्तरूपम्

आद्यं पुराणपुरुषं नव यौवनं च।

वेदेषु दुर्लभमदुर्लभमात्मभक्तौ

गोविन्दमादिपुरुषं तमहं भजामि॥

"मैं उन भगवान् गोविन्द की पूजा करता हूँ जो आदि पुरुष हैं, अद्वैत हैं, अच्युत हैं और अनादि

हैं। यद्यपि वे अनन्त रूपों में विस्तार करते हैं फिर भी वे भौतिक हैं और सबसे वृद्ध पुरुष होकर भी वे सदैव युवक लगते हैं। ऐसे नित्य, आनन्दमय तथा सर्व रूपों वाले भगवान् को वेदों के पुस्तकीय ज्ञान से नहीं जाना जा सकता अपितु वे स्वत: शुद्ध अनन्य भक्तों के समक्ष प्रकट होते हैं।''

हम शरीर को तिलक से सजाते समय विष्णु के बारह नामों का उच्चारण करके शरीर को सुरक्षा प्रदान करते हैं। यद्यपि गोविन्द या भगवान् विष्णु एक हैं किन्तु उनके विभिन्न नाम तथा रूप हैं जिनसे वे भिन्न भिन्न कार्य करते हैं। किन्तु यदि किसी को एकसाथ सारे नाम स्मरण नहीं रहते तो वह एकमात्र 'भगवान् विष्णु' 'भगवान् विष्णु' 'भगवान् विष्णु' नामोच्चारण और भगवान् विष्णु का सदैव चिन्तन कर सकता है। *विष्णोराराधनं परम्*—पूजा का यही सर्वोच्च रूप है। यदि कोई निरन्तर विष्णु का स्मरण करे तो भले ही उसे दुष्टात्माएँ सताती हों किन्तु उसकी रक्षा निस्सन्देह हो सकती है। *आयुर्वेदशास्त्र* की संस्तुति है—*औषधि चिन्तयेत् विष्णुम्*—यहाँ तक कि दवा खाते समय भी विष्णु का स्मरण करे क्योंकि दवा ही सब कुछ नहीं। भगवान् विष्णु असली रक्षक हैं। यह भौतिक जगत विपदाओं से भरा हुआ है (*पदं पदं यद् विपदाम्*)। अत: मनुष्य को वैष्णव बनकर निरन्तर विष्णु का चिन्तन करना चाहिए। हरे कृष्ण महामंत्र का कीर्तन करने से यह अधिक सुगम हो जाता है। इसीलिए श्री चैतन्य महाप्रभु ने संस्तुति की है—*कीर्तनीय:सदा हरि:, परं विजयते श्रीकृष्णसङ्कीर्तनम् तथा कीर्तनादेव कृष्णस्य मुक्तसंग: परं व्रजेत्।*

श्रीशुक उवाच
इति प्रणयबद्धाभिर्गोपीभि: कृतरक्षणम् ।
पाययित्वा स्तनं माता सन्न्यवेशयदात्मजम् ॥ ३० ॥

शब्दार्थ

श्री-शुक: उवाच—श्रीशुकदेव गोस्वामी ने कहा; इति—इस तरह; प्रणय-बद्धाभि:—मातृस्नेह से बँधे हुए; गोपीभि:—यशोदा आदि प्रौढ़ गोपियों के द्वारा; कृत-रक्षणम्—बालक की रक्षा करने के लिए सभी उपाय किये गये; पाययित्वा—इसके बाद बालक को पिला कर; स्तनम्—स्तन; माता—माता यशोदा ने; सन्न्यवेशयत्—बिस्तर पर लिटा दिया; आत्मजम्—अपने बेटे को।

श्रील शुकदेव गोस्वामी ने आगे कहा : माता यशोदा समेत सारी गोपियाँ मातृस्नेह से बँधी हुई थीं। इस तरह बालक की रक्षा के लिए मंत्रोच्चारण के बाद माता यशोदा ने बच्चे को अपना दूध पिलाया और उसे बिस्तर पर लिटा दिया।

तात्पर्य : जब बालक अपनी माता के स्तनों का दूध पीता है, तो यह स्वस्थता का शुभ लक्षण है।

इसलिए वृद्धा गोपियाँ कृष्ण को सुरक्षा प्रदान करने के लिए केवल मंत्रोच्चारण से ही संतुष्ट नहीं हुईं अपितु उन्होंने इसकी भी परीक्षा की कि उनके बालक का स्वास्थ्य ठीक है कि नहीं। जब बालक ने स्तन से दूध चूसा तो इससे पुष्टि हो गई कि बालक स्वस्थ है और जब गोपियाँ पूरी तरह तुष्ट हो गईं तो उन्होंने बालक को उसके बिस्तरे पर लिटा दिया।

तावन्नन्दादयो गोपा मथुराया व्रजं गताः ।
विलोक्य पूतनादेहं बभूवुरतिविस्मिताः ॥ ३१ ॥

शब्दार्थ

तावत्—तब तक, इस बीच; नन्द-आदयः—नन्द महाराज इत्यादि; गोपाः—सारे ग्वाले; मथुरायाः—मथुरा से; व्रजम्—वृन्दावन; गताः—वापस आ गये; विलोक्य—देखकर; पूतना-देहम्—पूतना के मृत विशाल शरीर को; बभूवुः—हो गये; अति—अत्यन्त; विस्मिताः—आश्चर्यचकित।

तब तक नन्द महाराज समेत सारे ग्वाले मथुरा से लौट आये और जब उन्होंने रास्ते में पूतना के विशाल काम शरीर को मृत पड़ा देखा तो वे अत्यन्त आश्चर्यचकित हुए।

तात्पर्य : नन्द महाराज के आश्चर्य को कई प्रकार से समझा जा सकता है। पहला तो यह कि ग्वालों ने इसके पूर्व वृन्दावन में इतना विशाल शरीर नहीं देखा था इसलिए सभी लोग आश्चर्यचकित थे। फिर वे विचार करने लगे कि आखिर इतना विशाल शरीर आया कहाँ से? क्या यह आकाश से गिरा था या क्या किसी भूल से या किसी योगिनी की शक्ति से वे वृन्दावन की बजाय किसी दूसरे स्थान पहुँच गये हैं? वे ठीक से अनुमान नहीं लगा सके कि क्या हुआ इसीलिए वे आश्चर्यचकित थे।

नूनं बतर्षिः सञ्जातो योगेशो वा समास सः ।
स एव दृष्टो ह्युत्पातो यदाहानकदुन्दुभिः ॥ ३२ ॥

शब्दार्थ

नूनम्—निश्चय ही; बत—मेरे दोस्तो; ऋषिः—सन्त पुरुष; सञ्जातः—बन गया है; योग-ईशः—योग शक्ति का स्वामी; वा—अथवा; समास—बन गया है; सः—उसने (वसुदेव ने); सः—वही; एव—निस्सन्देह; दृष्टः—देखा गया; हि—क्योंकि; उत्पातः—उत्पात; यत्—जो; आह—भविष्यवाणी की गई; आनकदुन्दुभिः—वसुदेव द्वारा।

नन्द महाराज तथा अन्य ग्वाले चिल्ला पड़े: मित्रो, जान लो कि आनकदुन्दुभि अर्थात् वसुदेव बहुत बड़ा सन्त या योगेश्वर बन चुका है। अन्यथा वह इस उत्पात को पहले से कैसे देख सकता था और हमसे इसकी भविष्य वाणी कैसे कर सकता था?

तात्पर्य : इस श्लोक से क्षत्रियों तथा बेचारे वैश्यों का अन्तर प्रकट होता है। वसुदेव राजनीतिक

स्थिति का अध्ययन करके देख सकते थे कि क्या होने वाला है जबकि खेतिहरों के राजा नन्द महाराज इतना ही अनुमान लगा सकते थे कि वसुदेव महाराज परम सन्त हैं और उन्हें योगशक्ति प्राप्त हो चुकी है। वास्तव में वसुदेव के अधीन सारी योगशक्तियाँ थीं अन्यथा वे कृष्ण के पिता कैसे बनते? किन्तु वास्तविकता तो यह थी कि कंस की राजनैतिक हलचलों का अध्ययन करके ही उन्होंने उत्पातों को पहले ही देख लिया था और नन्द महाराज को सतर्कता बरतने के लिए सावधान किया था। नन्द महाराज इस घटना की भविष्यवाणी को वसुदेव की आश्चर्यजनक योगशक्ति से सम्भव मान रह थे। हठयोग के अभ्यास द्वारा प्राप्त योगशक्ति से मनुष्य भविष्य को जान सकता है।

कलेवरं परशुभिश्छित्त्वा तत्ते व्रजौकसः ।
दूरे क्षिप्त्वावयवशो न्यदहन्काष्ठवेष्टितम् ॥ ३३ ॥

शब्दार्थ

कलेवरम्—पूतना के विशाल शरीर को; परशुभिः—कुल्हाड़ियों या फरसों से; छित्त्वा—खण्ड खण्ड करके; तत्—उस (शरीर को); ते—वे सभी; व्रज-ओकसः—व्रजवासी; दूरे—बहुत दूर; क्षिप्त्वा—फेंक कर; अवयवशः—शरीर के विभिन्न खंड; न्यदहन्—जला दिया; काष्ठ-वेष्टितम्—लकड़ी से ढका हुआ।

व्रजवासियों ने पूतना के शरीर को फरसों से खण्ड खण्ड कर डाला। फिर उन खण्डों को दूर फेंक दिया और उन्हें लकड़ी से ढक कर भस्मीभूत कर डाला।

तात्पर्य : यह प्रथा है कि साँप को मारने के बाद उसके शरीर को खंड खंड कर दिया जाता है कि कहीं हवा के संसर्ग से वह पुनः जीवित न हो उठे। साँप को मार देना ही काफी नहीं है, मारने के बाद इसे खंड खंड करके जला देना चाहिए। इससे खतरा जाता रहेगा। पूतना एक विशाल सर्प की तरह थी इसलिए ग्वालों ने इन्हीं सावधानियों को ध्यान में रखकर उसके शरीर को जला कर क्षार कर डाला।

दह्यमानस्य देहस्य धूमश्चागुरुसौरभः ।
उत्थितः कृष्णनिर्भुक्तसपद्याहतपाप्मनः ॥ ३४॥

शब्दार्थ

दह्यमानस्य—जलाकर क्षार करते समय; देहस्य—पूतना के शरीर का; धूमः—धुँआ; च—तथा; अगुरु-सौरभः—अगुरु जैसा सुगन्धित धुँआ; उत्थितः—शरीर से उठा हुआ; कृष्ण-निर्भुक्त—कृष्ण द्वारा स्तन चूसे जाने से; सपदि—तुरन्त; आहत-पाप्मनः—उसका भौतिक शरीर आध्यात्मिक बन गया अथवा वह भवबन्धन से छूट गया।

चूँकि कृष्ण ने उस राक्षसी पूतना का स्तनपान किया था, इसतरह जब कृष्ण ने उसे मारा तो वह तुरन्त समस्त भौतिक कल्मष से मुक्त हो गई। उसके सारे पाप स्वतः ही दूर हो गये अतएव

जब उसके विशाल शरीर को जलाया जा रहा था, तो उसके शरीर से निकलने वाला धुँआ अगुरु की सुगन्ध सा महक रहा था।

तात्पर्य : कृष्णभावनामृत का ऐसा ही प्रभाव होता है। यदि कोई व्यक्ति अपनी इन्द्रियों को भगवान् की सेवा में लगा कर किसी तरह कृष्णभावनाभावित हो जाता है, तो वह सारे भौतिक कल्मष से तुरन्त मुक्त हो जाता है। *शृण्वतां स्वकथा: कृष्ण: पुण्यश्रवणकीर्तन:* (*भागवत* १.२.१७)। कृष्ण की लीलाओं को सुनना शुद्ध जीवन की शुरुआत है। *पुण्यश्रवणकीर्तन:*—केवल सुनने तथा कीर्तन करने से मनुष्य शुद्ध बन जाता है। अत: भक्ति करते समय *श्रवणकीर्तन* अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। तब मनुष्य शुद्ध इन्द्रियों से भगवान् की सेवा करना शुरू करता है (*हृषीकेण हृषीकेशसेवनम्*)। *भक्तिरुच्यते*—यह भक्ति कहलाती है। जब येन केन प्रकारेण, प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रीति से पूतना से स्तनपान करा कर भगवान् की सेवा में उसे लगाया गया तो वह तुरन्त शुद्ध बन गई, यहाँ तक कि जब उसका दुष्ट भौतिक शरीर जलकर क्षार हो गया तो उससे अगुरु की सी सुगन्ध निकली जो कि अत्यन्त अच्छी लगने वाली सुगंधित जड़ी-बूटी है।

पूतना लोकबालघ्नी राक्षसी रुधिराशना ।
जिघांसयापि हरये स्तनं दत्त्वाप सद्गतिम् ॥ ३५ ॥
किं पुन: श्रद्धया भक्त्या कृष्णाय परमात्मने ।
यच्छन्प्रियतमं किं नु रक्तास्तन्मातरो यथा ॥ ३६ ॥

शब्दार्थ

पूतना—पेशेवर राक्षसी पूतना; लोक-बाल-घ्नी—जो मनुष्यों के बालकों को मार डालती थी; राक्षसी—राक्षसी; रुधिर-अशना—खून की प्यासी; जिघांसया—कृष्ण को मार डालने की इच्छा से (कृष्ण से ईर्ष्या करने तथा कंस द्वारा आदेश दिये जाने से); अपि—भी; हरये—भगवान् को; स्तनम्—अपने स्तन; दत्त्वा—प्रदान करके; आप—प्राप्त किया; सत्-गतिम्—वैकुण्ठ का सर्वोच्च पद; किम्—क्या कहा जाय; पुन:—फिर; श्रद्धया—श्रद्धायुत; भक्त्या—भक्तिपूर्वक; कृष्णाय—कृष्ण को; परमात्मने—परम पुरुष; यच्छन्—भेंट करते हुए; प्रिय-तमम्—अत्यन्त प्रिय; किम्—कुछ; नु—निस्सन्देह; रक्ता:—सम्बन्धी; तत्-मातर:—कृष्ण की स्नेहमयी माताएँ; यथा—जिस तरह।

पूतना सदा ही मानव शिशुओं के खून की प्यासी रहती थी और इसी अभिलाषा से वह कृष्ण को मारने आई थी। किन्तु कृष्ण को स्तनपान कराने से उसे सर्वोच्च पद प्राप्त हो गया। तो भला उनके विषय में क्या कहा जाय जिनमें माताओं के रूप में कृष्ण के लिए सहज भक्ति तथा स्नेह था और जिन्होंने अपना स्तनपान कराया या कोई अत्यन्त प्रिय वस्तु भेंट की थी जैसा कि माताएँ करती रहती हैं।

तात्पर्य : पूतना को कृष्ण से कोई स्नेह न था, प्रत्युत वह उनसे ईर्ष्या करती थी और उन्हें मार डालना चाहती थी। फिर भी जाने-अनजाने उसने उन्हें स्तनपान करा कर परमगति प्राप्त की। किन्तु वात्सल्य प्रेम में अनुरक्त भक्तों की भेंट अत्यन्त निष्ठायुक्त होती है। माता अपने पुत्र को स्नेह तथा प्रेम से कोई वस्तु भेंट करना चाहती है, तो उसमें ईर्ष्या का लेशमात्र भी नहीं रहता। अत: हम यहाँ तुलनात्मक अध्ययन कर सकते हैं। यदि पूतना उपेक्षा भाव से ईर्ष्यापूर्वक स्तनपान करा कर आध्यात्मिक जीवन का ऐसा सर्वोच्च पद प्राप्त कर सकती है, तो भला माता यशोदा तथा अन्य गोपियों के विषय में क्या कहा जाय जिन्होंने कृष्ण की सेवा लाड़-प्यार के साथ की और कृष्ण की तुष्टि के लिए हर वस्तु अर्पित कर दी? गोपियों को स्वत: परम पद प्राप्त हुआ। इसीलिए श्री चैतन्य महाप्रभु ने वात्सल्य प्रेम या माधुर्य प्रेम में गोपियों के स्नेह को ही जीवन की सर्वोच्च सिद्धि बतलाया (*रम्या काचिदुपासना व्रजवधूवर्गेण या कल्पिता*)।

पद्भ्यां भक्तहृदिस्थाभ्यां वन्द्याभ्यां लोकवन्दितै: ।
अङ्गं यस्या: समाक्रम्य भगवानपि तत्स्तनम् ॥ ३७॥
यातुधान्यपि सा स्वर्गमवाप जननीगतिम् ।
कृष्णभुक्तस्तनक्षीरा: किमु गावोऽनुमातर: ॥ ३८॥

शब्दार्थ

पद्भ्याम्—दोनों चरणकमलों से; भक्त-हृदि-स्थाभ्याम्—जिनके हृदय में भगवान् निरन्तर स्थित रहते हैं; वन्द्याभ्याम्—जिनकी सदैव वन्दना की जानी चाहिए; लोक-वन्दितै:—ब्रह्मा तथा शिव द्वारा, जो तीनों लोकों के वासियों द्वारा प्रशंसित हैं; अङ्गम्—शरीर को; यस्या:—जिस (पूतना) का; समाक्रम्य—आलिंगन करके; भगवान्—भगवान्; अपि—भी; तत्-स्तनम्—उस स्तन को; यातुधानी अपि—यद्यपि वह भूतनी थी; सा—उसने; स्वर्गम्—दिव्य धाम को; अवाप—प्राप्त किया; जननी-गतिम्—माता के पद को; कृष्ण-भुक्त-स्तन-क्षीरा:—चूँकि उनके स्तनों का पान कृष्ण ने किया था; किम् उ—क्या कहा जाय; गाव:—गौवें; अनुमातर:—माताओं की ही तरह जिन्होंने कृष्ण को अपना स्तन-पान कराया।.

भगवान् कृष्ण शुद्ध भक्तों के हृदय में सदैव स्थित रहते हैं और ब्रह्माजी तथा भगवान् शिवजी जैसे पूज्य पुरूषों द्वारा सदैव वन्दनीय हैं। चूँकि कृष्ण ने पूतना के शरीर का आलिंगन अत्यन्त प्रेमपूर्वक किया था और भूतनी होते हुए भी उन्होंने उसका स्तनपान किया था इसलिए उसे दिव्य लोक में माता की गति और सर्वोच्च सिद्धि मिली। तो भला उन गौवों के विषय में क्या कहा जाय जिनका स्तनपान कृष्ण बड़े ही आनन्द से करते थे और जो बड़े ही प्यार से माता के ही समान कृष्ण को अपना दूध देती थीं?

तात्पर्य : ये श्लोक बतलाते हैं कि भगवान् की भक्ति चाहे प्रत्यक्ष की जाय या अप्रत्यक्ष, ज्ञान से

की जाय या अनजाने, वह सफल होती है। पूतना न भक्त थी न ही अभक्त, वह तो कृष्ण को मारने के लिए कंस द्वारा भेजी गई राक्षसी थी। फिर भी पहले उसने अत्यन्त सुन्दर स्त्री का वेश धारण किया और कृष्ण के पास उसी तरह पहुँची जैसे स्नेहमयी माता जाती है, जिससे माता यशोदा और रोहिणी ने उसकी निष्कपटता पर सन्देह नहीं किया। भगवान् ने इन सब बातों को ध्यान में रखा। अत: उसे माता यशोदा जैसा ही पद प्राप्त हुआ। जैसाकि श्रील विश्वाथ चक्रवर्ती ठाकुर ने बतलाया है, ऐसी स्थिति में कोई व्यक्ति अनेक भूमिकाएँ निभा सकता है। पूतना को तुरन्त वैकुण्ठ लोक भेज दिया गया जिसे कभी कभी स्वर्ग भी कह दिया जाता है। इस श्लोक में वर्णित स्वर्ग कोई भौतिक लोक नहीं अपितु दिव्य लोक है। वैकुण्ठ लोक में पूतना को धाय का पद प्राप्त हुआ (*धात्युचिताम्*) जैसाकि उद्धव ने बतलाया है। गोलोक वृन्दावन में माता यशोदा की सहायता करने के लिए उसे धाय तथा दासी का पद दिया गया।

पयांसि यासामपिबत्पुत्रस्नेहस्नुतान्यलम् ।
भगवान्देवकीपुत्र: कैवल्याद्यखिलप्रद: ॥ ३९ ॥
तासामविरतं कृष्णे कुर्वतीनां सुतेक्षणम् ।
न पुन: कल्पते राजन्संसारोऽज्ञानसम्भव: ॥ ४० ॥

शब्दार्थ

पयांसि—दूध (शरीर से निकला); यासाम्—उन सबों का; अपिबत्—कृष्ण ने पिया; पुत्र-स्नेह-स्नुतानि—मातृ स्नेह के कारण, न कि बनावटी ढंग से, गोपियों के शरीर से निकला दूध; अलम्—पर्याप्त; भगवान्—भगवान्; देवकी-पुत्र:—देवकी के पुत्र रूप में प्रकट हुए; कैवल्य-आदि—यथा मुक्ति या ब्रह्म तेज में लीन होना; अखिल-प्रद:—ऐसे समस्त वरों के प्रदाता; तासाम्—उन सारी गोपियों का; अविरतम्—निरन्तर; कृष्णे—कृष्ण में; कुर्वतीनाम्—करते हुए; सुत-ईक्षणम्—माता द्वारा अपने शिशु को निहारना; न—कभी नहीं; पुन:—फिर; कल्पते—कल्पना की जा सकती है; राजन्—हे राजा परीक्षित; संसार:—जन्म-मृत्यु का भौतिक बन्धन; अज्ञान-सम्भव:—सुखी बनने की कामना करने वाले मूर्ख व्यक्तियों द्वारा अनजाने में स्वीकृत किया गया।

भगवान् कृष्ण अनेक वरों के प्रदाता हैं जिनमें कैवल्य अर्थात् ब्रह्म तेज में तादात्म्य भी सम्मिलित है। उन भगवान् के लिए गोपियों ने सदैव मातृ-प्रेम का अनुभव किया और कृष्ण ने पूर्ण संतोष के साथ उनका स्तन-पान किया। अतएव अपने माता-पुत्र के सम्बन्ध के कारण विविध पारिवारिक कार्यों में संलग्न रहने पर भी किसी को यह नहीं सोचना चाहिए कि अपना शरीर त्यागने पर वे इस भौतिक जगत में लौट आईं।

तात्पर्य : यहाँ कृष्णभावनामृत के लाभ का वर्णन हुआ है। कृष्णभावनामृत क्रमश: दिव्य स्तर पर

विकसित होता है। मनुष्य परम पुरुष, परम स्वामी, परम मित्र, परम पुत्र या परम युगल प्रेमी के रूप में कृष्ण का चिन्तन कर सकता है। यदि कृष्ण से किसी का इनमें से किसी रूप में दिव्य सम्बन्ध होता है, तो समझिये कि उसके भौतिक जीवन का अन्त हो गया है। जैसाकि *भगवद्गीता* (४.९) में पुष्टि हुई है—*त्यक्त्वा देहं पुनर्जन्म नैति मामेति*—ऐसे भक्तों के लिए भगवद्धाम वापस जाना सुनिश्चित है। *न पुन: कल्पते राजन् संसारोऽज्ञानसम्भव: ।* यह श्लोक इस बात की भी पुष्टि होती है कि जो भक्त कृष्ण से किसी विशेष सम्बन्ध में बँध कर निरन्तर ध्यान करते हैं, वे इस जगत में फिर नहीं लौटते। इस संसार में भी वही सम्बन्ध हैं। मनुष्य सोचता हैं 'यह मेरा पुत्र है', 'यह मेरी पत्नी है' 'यह मेरा प्रेमी है' या 'यह मेरा मित्र है।' किन्तु ये सम्बन्ध क्षणिक माया हैं। *अज्ञानसम्भव:*—ऐसी चेतना अज्ञान के कारण उत्पन्न होती है। किन्तु जब यही चेतना कृष्णभावनामृत में जागृत होती है, तो उसे पुन: आध्यात्मिक जीवन प्राप्त होता है और वह निश्चित रूप से भगवद्धाम वापस जाता है। यद्यपि गोपियाँ रोहिणी तथा माता यशोदा की सखियाँ थीं और कृष्ण को अपना स्तनपान कराती थीं परन्तु प्रत्यक्षत: कृष्ण की माताएँ न थीं। किन्तु उन्हें भगवद्धाम जाने का तथा कृष्ण की सासें, दासियाँ आदि बनने का वैसा ही अवसर प्राप्त हुआ जैसाकि रोहिणी तथा यशोदा को मिला। *संसार* शब्द अपने शरीर, घर, पति या पत्नी तथा बच्चों के प्रति अनुरक्ति का द्योतक है, किन्तु गोपियाँ तथा वृन्दावन के अन्य वासी अपने पति तथा घर के प्रति वैसा ही स्नेह तथा अनुरक्ति रखते हुए भी कृष्ण को अपने स्नेह का केन्द्र बनाये हुए थे। इसीलिए अगले जन्म में उन्हें गोलोक वृन्दावन जाने तथा कृष्ण के साथ रहकर शाश्वत दिव्य सुख-भोग की प्राप्ति निश्चित है। इस भौतिक जगत से छूट कर दिव्य पद को प्राप्त करने और भगवद्धाम जाने का सरलतम मार्ग भक्तिविनोद ठाकुर ने सुझाया है—*कृष्णेर संसार कर छाडिऽअनाचार*—सारे पाप कर्मों को त्याग कर कृष्ण के परिवार में रहना चाहिए। तभी मुक्ति निश्चित है।

कटधूमस्य सौरभ्यमवघ्राय व्रजौकस: ।
किमिदं कुत एवेति वदन्तो व्रजमाययु: ॥ ४१ ॥

शब्दार्थ

कट-धूमस्य—पूतना के शरीर के विभिन्न अंगों के जलने से उत्पन्न धुँए की; सौरभ्यम्—सुगन्धि; अवघ्राय—सूँघ कर; व्रज-ओकस:—दूर दूर के व्रजवासी; किम् इदम्—यह सुगन्धि कैसी है; कुत:—कहाँ से आ रही है; एव—निस्सन्देह; इति—इस तरह; वदन्त:—बातें करते; व्रजम्—व्रजभूमि में; आययु:—पहुँचे।

पूतना के जलते शरीर से निकले धुँए की सुगन्ध को सूँघ कर दूर दूर के अनेक व्रजवासी

आश्चर्यचकित थे और पूछ रहे थे, ''यह सुगन्धि कहाँ से आ रही है?'' इस तरह वे उस स्थान तक गये जहाँ पर पूतना का शरीर जलाया जा रहा था।

तात्पर्य : शव के जलने से निकले धुँए की गन्ध रुचिकर नहीं होती। इसीलिए ऐसी अद्‌भुत सुगंधि से व्रज के निवासी चकित थे।

ते तत्र वर्णितं गोपैः पूतनागमनादिकम् ।
श्रुत्वा तन्निधनं स्वस्ति शिशोश्चासन्सुविस्मिताः ॥ ४२ ॥

शब्दार्थ

ते—आये हुए सारे लोग; तत्र—वहाँ (नन्द महाराज के राज्य के पड़ोस में); वर्णितम्—वर्णित; गोपैः—ग्वालों द्वारा; पूतना-आगमन-आदिकम्—किस तरह पूतना आई तथा उसने उत्पात मचाया इन सबके विषय में; श्रुत्वा—सुनकर; तत्-निधनम्—तथा उसके मरने के विषय में; स्वस्ति—मंगल हो; शिशोः—बालक का; च—तथा; आसन्—अर्पित किया; सु-विस्मिताः—जो कुछ घटा था उससे आश्चर्यचकित होकर।

जब दूर दूर से आये व्रजवासियों ने पूरी कथा सुनी कि किस तरह पूतना आई और फिर कृष्ण द्वारा मारी गई तो वे हत्प्रभ रह गये और उन्होंने पूतना के मारने के अद्‌भुत कार्य के लिए उस बालक को आशीर्वाद दिया। निस्सन्देह नन्द महाराज वसुदेव के अत्यन्त कृतज्ञ थे जिन्होंने इस घटना को पहले ही देख लिया था। उन्होंने यह सोचकर वसुदेव को धन्यवाद दिया कि वे कितने अद्‌भुत हैं।

नन्दः स्वपुत्रमादाय प्रेत्यागतमुदारधीः ।
मूर्ध्न्युपाघ्राय परमां मुदं लेभे कुरूद्वह ॥ ४३ ॥

शब्दार्थ

नन्दः—महाराज नन्द; स्व-पुत्रम् आदाय—अपने पुत्र कृष्ण को अपनी गोद में लेकर; प्रेत्य-आगतम्—मानो कृष्ण मृत्यु के मुख से लौट आये हों (कोई कल्पना भी नहीं कर सकता था कि बालक ऐसे संकट से बच जाएगा); उदार-धीः—उदार तथा सरल होने से; मूर्ध्नि—कृष्ण के सिर पर; उपाघ्राय—सूँघ कर; परमाम्—सर्वोच्च; मुदम्—शान्ति; लेभे—प्राप्त किया; कुरु-उद्वह—हे महाराज परीक्षित।

हे कुरुश्रेष्ठ महाराज परीक्षित, नन्द महाराज अत्यन्त उदार एवं सरल स्वभाव के थे। उन्होंने तुरन्त अपने पुत्र कृष्ण को अपनी गोद में उठा लिया मानो कृष्ण मृत्यु के मुख से लौटे हों और अपने पुत्र के सिर को सूँघ कर निस्सन्देह दिव्य आनन्द का अनुभव किया।

तात्पर्य : नन्द महाराज यह नहीं समझ पाये कि उनके घर के लोगों ने किस तरह पूतना को घर में घुसने दिया, न ही वे इस स्थिति की गम्भीरता का अनुमान लगा सके। वे यह नहीं समझ पाये कि कृष्ण

ने पूतना को मारना चाहा था और उनकी लीलाएँ योगमाया द्वारा सम्पन्न की गईं। नन्द महाराज ने तो केवल इतना ही सोचा कि किसी ने उनके घर में घुस कर उत्पात मचा दिया है। यही नन्द महाराज का भोलापन था।

य एतत्पूतनामोक्षं कृष्णस्यार्भकमद्भुतम् ।
शृणुयाच्छ्रद्धया मर्त्यो गोविन्दे लभते रतिम् ॥ ४४॥

शब्दार्थ

य:—जो कोई; एतत्—यह; पूतना-मोक्षम्—पूतना का मोक्ष; कृष्णस्य—कृष्ण का; आर्भकम्—बाल-लीला; अद्भुतम्—अद्भुत; शृणुयात्—सुने; श्रद्धया—श्रद्धा तथा भक्ति पूर्वक; मर्त्य:—इस लोक का कोई भी व्यक्ति; गोविन्दे—आदि पुरुष गोविन्द के प्रति; लभते—पाता है; रतिम्—अनुरक्ति।

जो कोई भी भगवान् कृष्ण द्वारा पूतना के मारे जाने के विषय में श्रद्धा तथा भक्तिपूर्वक श्रवण करता है और कृष्ण की ऐसी बाल लीलाओं के सुनने में अपने को लगाता है उसे निश्चय ही आदि पुरुष रूप गोविन्द के प्रति अनुरक्ति प्राप्त होती है।

तात्पर्य : यह घटना, जिसमें उस डाइन ने बच्चे को मारने का प्रयास किया किन्तु स्वयं मारी गई, निश्चय ही अद्भुत है। इसीलिए इस श्लोक में *अद्भुतम्* शब्द प्रयुक्त हुआ है, जिसका अर्थ है विशेष रूप से आश्चर्यजनक। कृष्ण अपने विषय में अनेक अद्भुत कथाएँ छोड़ गये हैं। 'कृष्ण' नामक ग्रन्थ में इन कथाओं को पढ़ने मात्र से मनुष्य को इस भौतिक जगत से मुक्ति प्राप्त हो जाती है और वह आदि पुरुष गोविन्द के प्रति क्रमश: अनुरक्ति तथा भक्ति उत्पन्न कर लेता है।

इस तरह श्रीमद्भागवत के दसवें स्कंध के अन्तर्गत 'पूतना वध' नामक छठे अध्याय के भक्तिवेदान्त तात्पर्य पूर्ण हुए।